प्रकरण सोलह

धर्मोपदेश के लिए स्वतंत्र

मैं अब यहाँ संसार के सबसे बड़े नगर न्यूयार्क में बैठा हूँ। यह नगर कितना वैभवशाली है, किन्तु मेरा हृदय निरन्तर उस वृन्दावन के लिए लालायित रहता है। मुझे अपने वृन्दावन, उस पवित्र स्थान को लौट जाने में बहुत प्रसन्नता होगी। किन्तु "तुम यहाँ क्यों आये हो?" क्योंकि यह मेरा कर्तव्य है। मैं आप लोगों के लिए कुछ सन्देश लाया हूँ, क्योंकि मेरे वरिष्ठ, मेरे आध्यात्मिक गुरु ने मुझे यह आदेश दिया है : "तुमने जो कुछ सीखा है, उसको लेकर पश्चिम के देशों में जाओ और उस ज्ञान को वहाँ वितरित करो।" इसलिए सारी कठिनाइयों और सारी असुविधाओं के होते हुए भी मैं यहाँ हूँ, क्योंकि मैं कर्तव्य से बँधा हूँ।

—श्रील प्रभुपाद के एक व्याख्यान से

कमरा नम्बर ३०७ न तो आवास के लिए बना था, न आश्रम के लिए और न व्याख्यान-कक्ष के लिए। यह एक छोटा-सा, सँकरा-सा कार्यालय था, जिसमें न कोई फर्नीचर था, न टेलीफोन। इसके दरवाजे में पुराने कार्यालयों जैसा अपारदर्शी तुषाराच्छन्न काँच-फलक लगा था। दरवाजे के ऊपर शीशे के फलक वाली मध्यपट्टी थी। प्रभुपाद ने अपने धातु के बने प्रांत रखने के बक्से के सामने फर्श पर अपने कम्बल रख दिए। बक्सा अब एक कामचलाऊ डेस्क बन गया, जहाँ बैठकर वे लिखते थे। वे फर्श पर सो जाते। कमरे में न भोजन बनाने की सुविधाएँ थीं, न स्नान करने की, इसलिए उन्हें प्रतिदिन डॉ. मिश्र के कमरे तक जाना पड़ता था।

जब वे डॉ. मिश्र के योग आश्रम में कमरा न. ५०१ में रहते थे, तब डॉ. मिश्र उनकी आवश्यकताएँ पूरी करते थे। किन्तु अब प्रभुपाद आत्मनिर्भर थे और अपनी पुस्तकें बेचकर

जो धन कमाते थे, उसीसे उन्हें अपना प्रतिदिन का खर्च चलाना पड़ता था; बहत्तर डालर प्रति मास की दर से किराया चुकाना होता था। उन्होंने देखा कि थोड़ी-सी पिसी लाल मिर्च के लिए वेस्ट एंड सुपरेट उनसे पच्चीस सेंट लेता था; भारत में उन्हें जो मूल्य देना पड़ता उससे यह दस गुना था। उनकी कोई सुनिश्चित आय नहीं थी; उनका खर्च बढ़ गया था। और उनकी शारीरिक सुविधाएँ कम हो गई थीं। किन्तु उनके पास अब अपना स्थान था। अब वे जैसा चाहें, प्रचार-कार्य करने के लिए स्वतंत्र थे।

प्रभुपाद अमेरिका कृष्ण के विषय में प्रचार करने के लिए आये थे। इसके लिए उन्हें प्रारम्भ से ही अवसर प्राप्त होता रहा, चाहे वह अग्रवाल के घर में लोगों का अनौपचारिक रूप से मिलना रहा हो, या बटलर लायंस क्लब के समक्ष औपचारिक जन समूह हो, या डॉ. नार्मन ब्राउन की संस्कृत कक्षा हो, या डॉ. मिश्र की योग सोसायटी हो, या टैगोर सोसायटी हो। किन्तु ऐसे भाषण को वे अधिक महत्त्व न देते, जिसे सुनने के लिए लोग केवल एक बार जमा होते। यही मुख्य कारण था कि वे न्यूयार्क में अपना निजी भवन चाहते थे, जहाँ लोग नियमित रूप से आ सकें, हरे कृष्ण कीर्तन करें, उनके साथ प्रसाद ग्रहण करें और *भगवद्गीता* तथा *श्रीमद्भागवत* पर उनके प्रवचन सुनें।

योग स्टूडियो से बाहर निकलकर नीचे के एक छोटे-से कार्यालय-कक्ष में चले जाने पर प्रभुपाद को वह चीज मिल गई, जिसकी उन्हें तलाश थी—अर्थात् अपना एक निजी स्थान। किन्तु उस स्थान को शिष्टोक्ति के रूप में भी एक मन्दिर नहीं कहा जा सकता था। उनका नामपट्ट दरवाजे पर लगा था; जो कोई उन्हें खोजने आता, वहाँ उन्हें पा सकता था। लेकिन वहाँ जाने वाला कौन था? मन्दिर तो अपने वैभव और सौन्दर्य से लोगों को कृष्ण की अपनी ओर आकृष्ट कर सकता था, किन्तु कमरा न. ३०७ इसके सर्वथा विपरीत था; वहाँ नितान्त फटेहाली थी। आध्यात्मिक विषयों में अभिरुचि रखने वाले व्यक्ति को भी रेलगाड़ी के तंग डिब्बे जैसे उस कमरे में बिना कालीन वाले फर्श पर बैठना असुविधाजनक था।

डॉ. मिश्र के एक विद्यार्थी ने प्रभुपाद को एक टेप रेकर्डर भेंट किया था और प्रभुपाद ने उस पर अपने कुछ एकाकी भजन, जिन्हें वे केवल मंजीरे के साथ गाया करते थे, टेप किये थे। उन्होंने अपने एक लम्बे दार्शनिक निबन्ध *इंट्रोडक्शन टू गीतोपनिषद्* (गीतोपनिषद् की प्रस्तावना) को भी टेप कर लिया था। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ने उनसे कहा था, "यदि कोई सुनने वाला न भी हो, तो भी तुम चार दीवालों को कीर्तन सुनाते रहो।" किन्तु चूँकि अब वे ईश-प्रदत्त नई परिस्थिति में अपना सन्देश लोगों तक पहुचाने में स्वतंत्र थे, अतः उन्होंने निश्चय किया कि जो भी श्रोता आये, उसे वे सप्ताह में तीन बार संध्या समय (सोम, बुध, शुक्रवार को) प्रवचन देंगे।

उनके पहले श्रोताओं में मुख्यत: वे लोग थे, जो उनके विषय में सुन चुके थे या डॉ. मिश्र के योग-स्टूडियो में उनसे मिल चुके थे। और अपने कमरे की विपन्नावस्था के बावजूद, ये बैठकें उनके लिए नये जीवन का स्रोत बन गईं।

मार्च १८

सुमति मोरारजी को लिखे एक पत्र में उन्होंने अपनी आशावादिता प्रकट की :

> मैं बहुत प्रोत्साहित हुआ जब आपने मुझे लिखा, "मुझे लगता है कि अपनी बीमारी से पूर्ण रूप से स्वस्थ होने तक आप से वहाँ रहना चाहिए और अपना लक्ष्य पूरा करने के बाद ही वापस आना चाहिए।" मैं समझता हूँ कि आप द्वारा लिखवाए गये ये शब्द भगवान् बालकृष्ण के हैं, जो आपके सद्भाव के माध्यम से व्यक्त हुए हैं।
>
> आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि मैं पहले की तरह स्वस्थ हो गया हूँ और मेरा प्रचार-कार्य बहुत अच्छी तरह से आगे बढ़ रहा है। मुझे आशा है कि श्री श्री राधा-कृष्ण का एक मन्दिर बनाने की मेरी योजना भी भगवान् के अनुग्रह से पूरी होगी।
>
> बटलर, पेन्सिलवानिया से न्यूयार्क आने के पश्चात् मैंने उपर्युक्त कमरा सत्तर डालर प्रति मास के किराए पर ले लिया है और मैं *भगवद्गीता* और *श्रीमद्भागवत* पर संकीर्तन के साथ व्याख्यान देता हूँ और उसे सुनने के लिए अमेरिका के स्त्री-पुरुष आते हैं। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि वे संकीर्तन की भाषा नहीं समझते फिर भी वे ध्यान लगाकर सुनते हैं। जिस आन्दोलन का मैंने यहाँ सूत्रपात किया है, वह उनके लिए बिल्कुल नया है, क्योंकि अमेरिका के लोग सामान्यत: उन यौगिक क्रियाओं से ही परिचित हैं, जो कुछ भारतीय योगी यहाँ दिखाते हैं। उन्होंने कृष्ण विज्ञान को भक्ति के विषय में इसके पहले कभी नहीं सुना, तब भी वे मेरी बातें सुनते हैं। मेरे लिए यह बड़ी भारी सफलता है।

• • •

कमरा नम्बर ३०७ की बन्द खिड़कियों के बाहर जाड़े की रात का चौथा पहर है। प्रभुपाद के शब्दों के बीच-बीच में सड़क से कारों के हार्न या भोपूओं की मंद ध्वनि कभी-कभी सुनाई दे जाती है और कभी-कभी हडसन नदी के कोहरे भोंपू का चौंका देने वाला एकाकी घोष अचानक सुनाई पड़ जाता है। उनका कमरा सज्जारहित है, फिर भी गर्म है। प्रभुपाद *श्रीमद्भगवद्गीता* के दूसरे अध्याय पर बोल रहे हैं।

अब अर्जुन चिन्ताकुल है। उसे इस बात की चिन्ता है कि युद्ध करे या न करे। अपने समक्ष अपने उन सम्बन्धियों को देखकर जिनसे उसे युद्ध करना था, वह चिन्ताकुल था। और कृष्ण से उसका वाद-विवाद हो रहा था।

यहाँ एक विचारणीय बात है : कृष्ण परम ब्रह्म भगवान् हैं...

प्रभुपाद की वाणी गम्भीर और विश्वासोत्पादक थी। कभी-कभी उनका स्वर ऊँचा हो जाता और वे भावुक बन जाते। उनकी परिष्कृत अंग्रेज भाषाशैली पर बंगाली उच्चारण का गहरा प्रभाव था।

व्याख्यान के बीच वे अचानक रुक गये और उन्होंने कमरे में किसी को सम्बोधित किया।

प्रभुपाद : *वह क्या है?*

पुरुष : क्या?

प्रभुपाद : *यह कौन-सी पुस्तक है?*

पुरुष : *ओ, यह भगवद्गीता का अनुवाद है।*

प्रभुपाद को इस बात से अप्रसन्नता हुई कि जब वे व्याख्यान दे रहे हों तो कोई श्रोता पुस्तक पढ़ रहा हो। *श्रीमद्भागवत* में विद्वान वक्ताओं को जिस तरह सम्मान दिए जाने का वर्णन है, यह बात उसके अनुरूप कदापि नहीं थी।

प्रभुपाद : *ओ, ऐसा न करें। आप मुझे सुनें।*

पुरुष : *मैं सुन रहा हूँ।*

प्रभुपाद : *अपना ध्यान कहीं और न ले जाये। केवल मुझे सुनें।*

प्रभुपाद एक शिक्षक की भूमिका निभा रहे हैं; वे एक शिष्य को सही रास्ता वता रहे हैं। स्वाभाविक है कि ऐसा कोई अनिर्वाय कारण नहीं है कि उनके पास कभी-कभी आने वाले अतिथि उनकी आज्ञा का पालन करें। प्रभुपाद तो ध्यान देने का केवल अनुरोध कर रहे हैं और फिर भी लोगों को कृष्णभावनामृत से प्रभावित करने का प्रयत्न करते हुए वे माँग करते हैं, "केवल मेरी ओर ध्यान दो।"

आपने सुना है कि किसी को आध्यात्मिक गुरु सावधानीपूर्वक परीक्षा के बाद स्वीकार करना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे कोई अपना पति या पत्नी सावधानीपूर्वक परीक्षा के बाद स्वीकार करता है। भारत में वे अत्यन्त सावधान रहते हैं। चूँकि लड़के-लड़कियों का विवाह माता-पिता के निर्देशन में होता है, इसलिए माता-पिता इसका पूरा ध्यान रखते हैं। आध्यात्मिक गुरु को भी उसी तरह स्वीकार करना चाहिए। यह आवश्यक है। वैदिक आदेशों के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का आध्यात्मिक गुरु होना चाहिए। आपने कदाचित् यज्ञोपवीत देखा है। हम यज्ञोपवीत धारण करते हैं। श्रीमान् कोहेन, आपने यज्ञोपवीत देखा है?

प्रभुपाद रुक जाते हैं। उनकी श्रोता-मण्डली ने पतले, श्वेत सूत से बने उनके यज्ञोपवीत को नहीं देखा है, जो वे कमीज के नीचे शरीर के ऊपरी भाग में आर-पार पहने हुए हैं। हजारों वर्षों से भारत के ब्राह्मण ऐसे यज्ञोपवीत पहनते आये हैं, जो उनके शरीर पर बाएँ कंधे से लटककर सीधे दाहिनी ओर कमर तक जाता है। प्रत्येक ब्राह्मण दिन में तीन बार पवित्र गायत्री मंत्र का जप करते समय यज्ञोपवीत को अपने दाहिने हाथ में लिए रहता है। किन्तु अमेरिकनों के लिए यह सब कुछ वास्तव में विचित्र हैं। स्वयं प्रभुपाद भी उनके लिए विचित्र है। अपनी भूरी चादर को कंधों से लपेटे हुए वे पालथी मारकर एक पतले तकिये पर सीधे तनकर बैठते है। उनके सामने एक बक्स है, जो उनके लिए अब डेस्क और पाठ-मंच का काम करता है। उनके श्रोता बक्स के दूसरी ओर उनकी ओर मुंह किये बैठते है। संकीर्ण कमरे में वे एक-दूसरे के बिल्कुल पास-पास होते हैं। अमेरिकनों के लिए प्रभुपाद एक दुर्बल, लघुकाय विदेशी हैं; फिर भी वे पूर्णतः आश्वस्त हैं, मानो वे न्यूयार्क में विदेशी न हों। उनकी सबल उपस्थिति का आभास हर अभ्यागत को होता है। उनके मस्तक पर सफेद मिट्टी की दो खड़ी रेखाएँ स्पष्टतः अंकित हैं। उनके गेरुए वस्त्र उनके शरीर के चारों ओर ढीले-ढाले लिपटे हैं। वे केवल कुछ क्षण के लिए यह पूछने के लिए रुकते हैं कि श्रोताओं ने यज्ञोपवीत देखा है या नहीं।

यह यज्ञोपवीत इस बात का संकेत है कि उस व्यक्ति का कोई आध्यात्मिक गुरु है। यहाँ, निस्सन्देह, ऐसा कोई अन्तर नहीं है; किन्तु हिन्दू-परम्परा के अनुसार एक विवाहिता लड़की के भी कुछ चिह्न होते हैं, जिससे लोग जान सकें कि वह विवाहिता है। वह एक लाल चिह्न धारण करती है, जिससे अन्य लोग जान जाते है कि वह विवाहिता है। बालों में विभाजन के अनुसार... इस रेखा को क्या कहते है?

पुरुष : *पार्ट (विभाजन रेखा)।*

प्रभुपाद : *हुँ।*

पुरुष : *पार्ट (विभाजन रेखा)।*

प्रभुपाद : *वर्तनी क्या है?*

पुरुष : *पार्ट (पी.ए.आर.टी.)।*

प्रभुपाद : *पार्ट। इस विभाजन रेखा का भी कुछ अर्थ है।* (अमेरिकन लोग अंग्रेजी जानते हैं और प्रभुपाद गीता जानते हैं। किन्तु जहाँ प्रभुपाद काफी अच्छी अंग्रेजी जानते हैं, वहाँ अमेरिकन गीता के बारे में लगभग कुछ भी नहीं जानते और प्रभुपाद को उसके बारे में उन्हें थोड़ा-थोड़ा करके बताना है। किन्तु अंग्रेजी शब्दावली के सम्बन्ध में वे कभी-कभी उनसे सहायता लेते हैं।) *जब विभाजन रेखा मध्य में होती है, तब उसका अर्थ है कि लड़की का अपना पति है और वह एक सम्मानित परिवार की है। और जब विभाजन रेखा*

यहाँ है, तब वह वेश्या होती है। (हल्के संकेत के साथ वे अपना हाथ ऊपर उठाते है, जो वस्तुतः उनके सिर तक नहीं पहुँचता। तो भी किंचित् इंगित से वे विभाजन रेखा या माँग के सिर के एक ओर होने का संकेत करते हैं) और फिर, यदि लड़की सुसज्जित हो, तो यह समझना चाहिए कि उसका पति घर पर है। और यदि वह सुसज्जित न हो तो समझना चाहिए कि उसका पति घर से दूर है। आप समझे? और एक विधवा का वेश... । इसके कई लक्षण हैं। इसी तरह, यज्ञोपवीत भी इस बात का लक्षण है कि उस व्यक्ति के आध्यात्मिक गुरु हैं, ठीक वैसे ही जैसे लाल चिह्न सूचित करता है कि लड़की का पति है।

यद्यपि प्रभुपाद की श्रोता-मण्डली क्षण-भर के लिए उस वर्णन पर मुग्ध हो सकती है, जो भारतीय सामाजिक रीति-रिवाजों का वर्णन लगता है, एक सावधान श्रोता उनके व्याख्यान के महत्तर सन्दर्भ को ग्रहण कर सकता है कि प्रत्येक व्यक्ति को एक आध्यात्मिक गुरु अवश्य बनाना चाहिए। कभी-कभी इकट्ठे होने वाले श्रोताओं के लिए सचमुच यह गम्भीर प्रकरण है। आध्यात्मिक गुरु की क्या आवश्यकता है? क्या यह केवल भारत के लिए ही सत्य नहीं है? किन्तु वे कहते है, "प्रत्येक व्यक्ति का एक आध्यात्मिक गुरु होना चाहिए।" फिर, आध्यात्मिक गुरु है क्या? हो सकता है कि उनका आशय यह हो कि यज्ञोपवीत या सधवा स्त्री के केशों के बीच माँग या विधवा का परिधान, इन सबकी तरह आध्यात्मिक गुरु का वरण भी हिन्दू-संस्कृति का एक अंग है। श्रोता-मण्डली उनके व्याख्यान को आसानी से एक तरह की सांस्कृतिक व्याख्या मान सकती है, ठीक वैसे ही जैसे कोई व्यक्ति आसानी से विदेश के किसी जन-समाज के आचार-विचार पर आधारित कोई चलचित्र देखता है, यद्यपि उसका इरादा यह नहीं होता कि वह इन आचार-विचारों को स्वयं ग्रहण करे। स्वामीजी अपने शरीर पर यज्ञोपवीत धारण किये हैं, किन्तु यह केवल हिन्दुओं के लिए है और इसका यह तात्पर्य नहीं है कि उसे अमेरिकन लोग भी धारण करें। किन्तु हिन्दुओं के ये विश्वास बड़े रोचक हैं ।

सचमुच, प्रभुपाद का इसके अतिरिक्त अन्य कोई उद्देश्य नहीं है कि परम सत्य को वे उस रूप में प्रस्तुत करें, जैसाकि उन्होंने गुरु-परम्परा में सुन रखा है। किन्तु यदि उस रेल के डिब्बे जैसे संकीर्ण कक्ष में कोई अपने से पूछे, "क्या मैं अपने आपको किसी आध्यात्मिक गुरु को समर्पित कर दूँ," तो उसे एक सच्चे गुरु की उपस्थिति के प्रश्न का सामना करना होगा। प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र है कि वह उनकी वार्ता को चाहे जिस रूप में ले।

जीवन के पग-पग पर आध्यात्मिक गुरु पथ-प्रदर्शन करता है। ऐसा पथ-प्रदर्शन करने के लिए आध्यात्मिक गुरु को भी पूर्ण मानव होना चाहिए, अन्यथा वह पथ-प्रदर्शन कैसे कर सकेगा? प्रसंगतः, अर्जुन जानता है कि श्रीकृष्ण पूर्ण व्यक्ति हैं। अतः वह उन्हें

स्वीकार करता है—शिष्यस्तेऽहम् शाधि माम् त्वाम् प्रपन्नम।

संस्कृत! कोई इसका एक शब्द भी नहीं जानता। किन्तु श्रील प्रभुपाद के लिए इस तरह का कभी कोई प्रश्न नहीं है—भले ही वे न समझें, शास्त्र की दिव्य ध्वनि उन्हें पवित्र कर देगी। यह उनके अधिकार की वात है और वे इसे छोड़ नहीं सकते। और प्रथम प्रभाव की दृष्टि से भी विदेशी होते हुए भी संतों के मूल कथनों के उद्धरणों से विद्वत्तापूर्ण अधिकार के वातावरण की सृष्टि होती है।

"मैं आपके प्रति अपने आपको समर्पित करता हूँ और मुझे आप अपना शिष्य स्वीकार करें," अर्जुन कहता है। मैत्रीपूर्ण वार्ता से उलझन का समाधान नहीं होता। मैत्रीपूर्ण वार्ताएँ विना किसी समाधान के सालों चलती रह सकती हैं। इसलिए यहाँ अर्जुन कृष्ण को अपना आध्यात्मिक गुरु स्वीकार करता है। इसका आशय यह है कि कृष्ण जो भी निर्णय करेंगे, उसे अर्जुन स्वीकार करेगा। आध्यात्मिक गुरु के आदेश को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता। अतएव प्रत्येक को एक ऐसे आध्यात्मिक गुरु का चयन करना है, जिसके आदेशों का पालन करने से उससे कोई भूल नही होगी।

मान लीजिए आप एक अयोग्य व्यक्ति को अपना गुरु स्वीकार कर लेते हैं और वह गलत ढंग से आपका पथ-प्रदर्शन करता है। तव आपका सारा जीवन नष्ट हो जाता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को ऐसा आध्यात्मिक गुरु स्वीकार करना चाहिए, जिसके मार्गदर्शन से उसका जीवन पूर्ण बने। आध्यात्मिक गुरु और शिष्य के बीच का सम्बन्ध ऐसा ही होना चाहिए। यह केवल एक औपचारिकता नहीं है। यह आध्यात्मिक गुरु और शिष्य, दोनों के लिए बड़े उत्तरदायित्व का कार्य है। और... हाँ?

विद्यार्थी : *किन्तु यदि शिष्य पहले से अज्ञान में है...*

प्रभुपाद : हाँ। *(प्रभुपाद विद्यार्थी के गम्भीर प्रश्न को स्वीकार करते है। 'अज्ञान में पड़े शिष्यों' के ऐसे ही प्रश्नों के उत्तर देने के लिए वे भारत में अवकाश-प्राप्त जीवन को छोड़कर अमेरिका आये हैं)।*

विद्यार्थी : *शिष्य को कैसे मालूम हो कि वह किसे अपना गुरु बनाए?—क्योंकि सही निर्णय के लिए उसके पास ज्ञान नहीं है।*

प्रभुपाद : *हाँ, तो पहली आवश्यकता यह है कि आप एक आध्यात्मिक गुरु की खोज में लगें, ठीक वैसे ही जैसे आप कोई विद्यालय खोजते हैं। आपको कम-से-कम कुछ प्रारम्भिक ज्ञान तो होना ही चाहिए कि विद्यालय क्या होता है। ऐसा नहीं हो सकता कि आप विद्यालय की खोज में निकलें और किसी कपड़े की दुकान पर चले जायें। यदि आप इतने अज्ञानी हैं कि आपको यह भी नहीं मालूम कि विद्यालय क्या है और कपड़े की दुकान क्या है, तो आप बहुत कठिनाई में होंगे। आपको कम-से-कम यह तो जानना ही*

चाहिए कि विद्यालय क्या है। अतएव वह ज्ञान इस तरह है :

तद्-विज्ञानार्थं स गुरुं एवाभिगच्छेत्।

समित्-पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्।

इस श्लोक के अनुसार, आध्यात्मिक गुरु की आवश्यकता उस व्यक्ति के लिए है, जो दिव्य ज्ञान के विषय में जिज्ञासु है। श्रीमद्भागवत् में एक दूसरा श्लोक है—तस्माद् गुरुं प्रपद्येत जिज्ञासुः श्रेय उत्तमम्। "यदि कोई व्यक्ति दिव्य विषयों के प्रति जिज्ञासु है, तो उसे आध्यात्मिक गुरु की खोज करनी चाहिए।" जब तक कोई दिव्य विषयों का कम-से-कम प्रारम्भिक ज्ञान न रखता हो, तब तक वह आध्यात्मिक गुरु से क्या जिज्ञासा कर सकता है?

उनका प्रश्नकर्ता सन्तुष्ट प्रतीत होता है। उनका व्याख्यान किसी विशेष विषय पर तैयार किया हुआ भाषण नहीं है। यद्यपि वह विद्वत्तापूर्ण और गम्भीर है, तथापि वह अनेक दार्शनिक विषयों का स्पर्श करता है। तब भी वे शब्दों की खोज में कभी रुकते नहीं। उन्हें ठीक-ठीक पता है कि वे क्या कहना चाहते हैं; प्रश्न केवल यह है कि उनकी श्रोता-मण्डली कितना ग्रहण कर सकती है।

किन्तु कभी-कभी वे हल्के मन से अपने न्यूयार्कवासी साथियों से उनकी कठिनाइयों के विषय में हँस-हँसकर बात करते है—"मान लीजिए, भारी हिमपात हो जाता है; पूरा न्यूयार्क नगर हिम से आप्लावित हो जाता है और आप असुविधाओं से घिर जाते हैं। यह एक प्रकार की यातना है, परन्तु उस पर आपका कोई नियंत्रण नहीं है।" कभी-कभी वे डॉ. मिश्र के विद्यार्थियों की प्रशंसा करते हैं कि उन्होंने अपने शिक्षक से बड़ी अच्छी तरह शिक्षा ग्रहण की है : "डॉ. मिश्र जो भी सिखाते है, वह बहुत अच्छा है। वह सिखाते है कि सबसे पहले आप यह जानें कि, "मैं कौन हूँ?" यह बहुत अच्छा है। किन्तु इस "मैं कौन हूँ" को *भगवद्गीता* से भी जाना जा सकता है—'मै यह शरीर नहीं हूँ' " और कभी कभी कोई अभ्यागत किसी अप्रासंगिक प्रश्न को लेकर बोल उठता है और स्वामीजी धैर्यपूर्वक उस पर विचार करने का प्रयत्न करते हैं।

ऐसी सहिष्णुता के पीछे भी प्रभुपाद का मनोभाव सदैव अति शीघ्रता का रहता है। कभी-कभी वे बहुत शीघ्रतापूर्वक बात करते हैं और ऐसा लगता है कि उनकी इच्छा पश्चिम में कृष्ण-चेतना जितना जल्दी हो सके प्रतिष्ठित करने की है। उनके कोई अनुयायी नहीं हैं, केवल कुछ पुस्तकें हैं। कोई मन्दिर भी नहीं है और वे स्पष्ट कहते हैं कि वे समय के विरुद्ध दौड़ लगा रहे हैं : "मैं एक वृद्ध मनुष्य हूँ। मैं किसी समय भी विदा हो सकता हूँ।" इसलिए कृष्ण-चेतना-दर्शन के औपचारिक आख्यान के पीछे उनकी एक चिन्ता है, एक उत्कट इच्छा है कि कम-से-कम एक व्यक्ति को वे तत्काल कृष्ण-चेतना को ग्रहण करने के लिए आश्वस्त कर सकें।

बटलर, आनन्द आश्रम और डॉ. मिश्र के कारण जो कठिन परिस्थितियां थीं, अब वे पीछे रह गई हैं। वे परम सत्य के विषय में जी-भरकर बोलने को स्वतंत्र हैं। जीवन-भर वे इसके लिए तैयारियाँ करते रहे हैं, तो भी वे अभी भी कृष्ण को प्रस्तुत करने की सर्वोत्तम विधियों की खोज में हैं, पश्चिम के श्रोताओं को तलाशते हुए, उनकी प्रतिक्रियाओं के परीक्षण में लगे हुए।

हमें सदैव स्मरण रखना चाहिए कि वे भगवान् हैं। वे सर्वशक्तिमान हैं। शक्ति में कोई उनसे पार नहीं पा सकता। सौन्दर्य में—जहाँ तक सौन्दर्य का सम्बन्ध है, जब वे युद्ध-भूमि में थे... क्या आपमें से किसी ने कृष्ण का चित्र देखा है? क्या आपने देखा है? क्या आपमें से किसी ने कृष्ण को देखा है? ओह, नहीं।

श्रोता-मण्डली की ओर देखते हुए प्रभुपाद रुक जाते है, उनकी आवाज क्षीण हो जाती है। कृष्ण को किसी ने कभी नहीं देखा है। उनमें से किसी को भी कृष्ण का किंचित् भी पूर्व ज्ञान नहीं है। भारत में करोड़ों लोग प्रतिदिन शाश्वत सौन्दर्य और सत्य के रूप में भगवान् कृष्ण की पूजा करते हैं और मूर्ति, चित्र या नृत्य की भंगिमा में उनके अनुग्रहपूर्ण रूप का दर्शन करते हैं। *भगवद्गीता* में उनका दार्शनिक उपदेश सर्वप्रसिद्ध है और प्रभुपाद उनके अन्तरंग सन्देशवाहक हैं। तब भी ३०७ नम्बर के कमरे में सभी महिलाएँ और भद्र पुरुष स्वामीजी की ओर शून्य दृष्टि से निहारते हैं।

• • •

प्रभुपाद इस बात पर विचार प्रकट कर रहे हैं कि भारत में किसी पवित्र स्थान (या तीर्थस्थान) को जाने का वास्तविक अभिप्राय क्या है।

तीर्थस्थान में इसलिए जाना चाहिए कि वहाँ रहने वाले आध्यात्मिक ज्ञान में पारंगत किसी कुशाग्र-बुद्धि विद्वान को खोजा जाये और उसके साहचर्य में रहा जाये। जैसे मैं हूँ... मेरा निवास वृन्दावन में है। वृन्दावन में बहुत-से विद्वान और संत-महात्मा रहते हैं। लोगों को ऐसे ही पवित्र स्थानों में जाना चाहिए, केवल जल में स्नान के लिए नहीं। जाने वाला इतना समझदार होना चाहिए कि वह वहाँ रहने वाले आध्यात्मिक दृष्टि से समुन्नत किसी विद्वान को खोज निकाले, उससे शिक्षा ग्रहण करे और लाभान्वित हो। यदि किसी व्यक्ति का अनुराग तीर्थयात्रा में इसलिए है कि वह वहाँ स्नान करे, किन्तु विद्वानों के उपदेश सुनने में उसे आकर्षण नहीं है, तो ऐसे व्यक्ति को निरा गधा समझना चाहिए। (प्रभुपाद हँसते हैं) सा एव गो-खरः। गो का अर्थ "गाय" है और खर का अर्थ "गधा" है। इस तरह पूरी सभ्यता की गति गायों और गधों जैसी है। हर एक अपना तादात्म्य शरीर से कर रहा है।... हाँ, आप कुछ कहना चाहते हैं?

महिला : *गोपनीय स्थानों के रूप में स्थानों में...*

प्रभुपाद : *पवित्र, हाँ।*

महिला : *क्या यह 'पवित्र स्थानों' की बात है?*

प्रभुपाद : हाँ।

महिला : *क्या यह सच नहीं है कि ऐसे स्थानों में अधिक आकर्षण इसलिए होता है कि वहाँ संत-महात्माओं और अधिक उन्नत विद्वानों से मिलना होता है?*

प्रभुपाद : *ओह, हाँ, निश्चय ही, निश्चय ही। इसीलिए स्वयं उन स्थानों में भी कुछ आकर्षण होता है।*

महिला : *हाँ और जब...*

प्रभुपाद : *जैसे वृन्दावन में—यह व्यावहारिक है। मैं इस समय यहाँ न्यूयार्क में बैठा हूँ, जो संसार का सबसे बड़ा नगर है; कितना वैभवशाली नगर है यह! किन्तु मेरा हृदय सदैव वृन्दावन के लिए तड़प रहा है।*

महिला : *हाँ। (हँसती है)*

प्रभुपाद : *हाँ, मैं यहाँ प्रसन्न नहीं हूँ।*

महिला : *हाँ, मैं जानती हूँ।*

प्रभुपाद : *मुझे अपने वृन्दावन को, उस पवित्र स्थान को लौटने में बहुत प्रसन्नता होगी। किन्तु कोई पूछ सकता है, "आप यहाँ क्यों आये है?" क्योंकि यह मेरा कर्तव्य है। मैं आप लोगों के लिए कुछ सन्देश लाया हूँ। क्योंकि मुझे अपने वरिष्ठ, अपने आध्यात्मिक गुरु से यह आदेश मिला है, "तुमने जो कुछ सीखा है, तुम्हें चाहिए कि पाश्चात्य देशों में जाओ और अपने ज्ञान का वितरण वहाँ करो।" इसलिए अपनी अनेक कठिनाइयों और असुविधाओं को झेलकर भी मैं यहाँ हूँ। क्योंकि मैं कर्तव्य से बँधा हूँ। यदि मैं जाऊँ और वृन्दावन में रहने लगूँ, तो उससे मुझे व्यक्तिगत सुविधाएँ होंगी; मैं वहाँ सुखपूर्वक रहूँगा और मुझे कोई चिन्ता नहीं रहेगी, किसी भी प्रकार की। किन्तु इस वृद्धावस्था में मैंने ये सारे खतरे इसलिए उठाए हैं कि मैं कर्तव्य से बँधा हूँ। मैं कर्तव्य से बँधा हूँ। इसलिए मुझे अपना कर्तव्य सारी कठिनाइयों के होते हुए भी पूरा करना है।*

एक बाहरी व्यक्ति किवाड़ खोलता है और हिचकता हुआ अन्दर देखता है।

प्रभुपाद (अपना व्याख्यान बन्द करते हुए) : हाँ, हाँ, अन्दर आ जाइए। आप यहाँ आ सकते हैं।

• • •

राबर्ट नेल्सन यद्यपि न्यूयार्क नगर में रहकर बड़ा हुआ था, परन्तु वह बहुत मंद, सरल

ग्रामीण बालक जैसा था। उसकी चाल-ढाल गंवारु थी। वह बीस वर्ष का था। वह जोर पकड़ते हुए हिप्पी आन्दोलन का अंग नहीं था। वह मारिजुआना या इस तरह की अन्य नशीली वस्तुओं का सेवन नहीं करता था। लोगों से उसका मिलना-जुलना भी अधिक नहीं था। वह अकेला था। उसने स्टैटेन आइलैंड कम्यूनिटी कालेज में कुछ प्राविधिक शिक्षा प्राप्त की थी और रेकार्ड बनाने के धंधे में हाथ आजमाया था, पर उसे कोई खास सफलता नहीं हुई थी। ईश्वर में उसकी रुचि थी और नगर में इधर-उधर वह कई आध्यात्मिक बैठकों में सम्मिलित होता रहता था। इस तरह एक दिन वह डॉ. मिश्र का व्याख्यान सुनने उनकी योग सोसायटी में जा पहुँचा और वहाँ उसने पहली बार प्रभुपाद को देखा।

रावर्ट : *स्वामीजी पालथी मारकर एक बेंच पर बैठे थे। मीटिंग चल रही थी और डॉ. मिश्र कुछ लोगों के समूह के सामने खड़े थे। समूह में लगभग पचास व्यक्ति थे। डॉ. मिश्र "मैं चेतना हूँ" विषय पर बोल रहे थे। बोल चुकने के बाद डॉ. मिश्र ने उन्मुक्त मुसकान के साथ शानदार ढंग से लोगों को स्वामीजी का परिचय दिया। "ये स्वामीजी हैं," उन्होंने कहा। विशद परिचय देने के लिए वे झूम उठे और हाथ से संकेत करने लगे। उनका यह ढंग बहुत सुन्दर था। यह परिचय डॉ. मिश्र के एक घंटे तक बोलने के बाद कराया गया। स्वामीजी ने भाषण नहीं दिया। उन्होंने एक गीत गाया।*

तत्पश्चात् मैं उनके पास गया। वे खुलकर मुसकराए और बोले कि युवकों को कृष्ण-चेतना अपनाते देखना उन्हें बहुत पसन्द था। इस विषय पर वे बहुत गम्भीरता से बात कर रहे थे। वे सभी युवकों को चाहते थे। इसलिए मैंने सोचा कि यह तो बहुत अच्छा है। यह सार्थक बात है। अत: मैं सहायता करना चाहता था।

हम वहाँ खड़े-खड़े लगभग एक घंटा बातें करते रहे। पिछले भाग में डॉ. मिश्र का पुस्तकालय था और हमने कुछ पुस्तकें देखीं—अर्जुन, कृष्ण, रथ और अन्य चीजें। तब हमने चारों ओर चक्कर लगाया। हमने दीवाल पर टंगे कुछ स्वामियों के चित्र देखे। बहुत देर होने लगी तो प्रभुपाद बोले, "कल दस बजे निचली मंजिल पर मेरे कार्यालय में आइये।"

अगले दिन जब रावर्ट नेल्सन ३०७ नम्बर के कमरे पर गया, तो प्रभुपाद ने उसे अन्दर आने के लिए आमंत्रित किया। स्पष्टत: वह कमरा रहने के लिए नहीं बना था। उसमें न शौचालय था, न स्नान-कक्ष, न कुर्सी, न शैया और न टेलीफोन। दीवालों का "रंग बिल्कुल गहरा और मनहूस था।" प्रभुपाद ने रावर्ट को *श्रीमद्भागवत* के तीन-भागों का सेट दिखाया जिसे रावर्ट ने १६.५० डालर में खरीद लिया। तब प्रभुपाद ने उसे एक छोटा कागज का टुकड़ा दिया जिस पर हरे कृष्ण मंत्र मुद्रित था।

रावर्ट : जब स्वामीजी मुझे कागज का टुकड़ा दे रहे थे तब उनके चेहरे पर ऐसी प्रफुल्ल मुसकान थी मानो वे मुझे सारा विश्व दे रहे हों।

हमने सारा दिन एकसाथ विताया। एक अवसर पर वे बोले, "हम लोग सोने जा रहे हैं।" तब वे अपनी छोटी डेस्क की बगल में लेट गये और मैंने कहा, "मैं भी थक गया हूँ।" इसलिए मैं कमरे के दूसरे कोने में लेट गया और इस तरह हमने आराम किया। मैं फर्श पर लेटा था। लेटने के लिए एकमात्र वही स्थान था। उन्होंने देर तक विश्राम नहीं किया, मैं समझता हूँ, उन्होंने केवल डेढ़ घंटे तक विश्राम किया। फिर हमने शेष दिन साथ-साथ विताया। वे भगवान् चैतन्य के और उनकी लीलाओं के विषय में बातें करते रहे और उन्होंने मुझे भगवान् चैतन्य का एक छोटा-सा चित्र दिखाया। तब वे भगवान् चैतन्य के भक्तों, नित्यानंद और अद्वैत के विषय में चर्चा करने लगे। उनके पास भगवान् चैतन्य के पाँच भक्तों का एक चित्र था और एक चित्र उनके आध्यात्मिक गुरु का था। उन्होंने संस्कृत में कुछ कहा और तब उसका अनुवाद अंग्रेजी में किया। उनके रहने का कमरा वास्तव में कमरे जैसा नहीं था। कोई भी उसे देखकर निराश होता।

रावर्ट नेल्सन प्रभुपाद की वैसी सहायता नहीं कर सका, जिसकी उन्हें आवश्यकता थी। महाप्रभु चैतन्य का कथन है कि मनुष्य के पास चार प्रकार की सम्पदा होती है— उसका जीवन, धन, बुद्धि और वाणी। इनमें से उसे कम-से-कम एक को भगवान् की सेवा में लगाना चाहिए। रावर्ट नेल्सन को ऐसा नहीं प्रतीत होता था कि वह अपना सम्पूर्ण जीवन कृष्ण-चेतना को अर्पित करने में समर्थ था और जहाँ तक धन का सम्बन्ध था वह उसके पास बहुत कम था। उसकी बुद्धि भी सीमित थी और उसका बोलने का ढंग प्रभावहीन था। उसके पास ऐसी विस्तृत मित्र-मंडली या ऐसे परिचित लोग भी नहीं थे, जिनसे वह बातचीत कर सकता था। किन्तु स्वामीजी के प्रति उसके मन में स्नेह था और नगर के अस्सी लाख लोगों में वह सचमुच अकेला व्यक्ति था, जो व्यक्तिगत रूप से स्वामीजी में अभिरुचि रखता था और उनकी सहायता करने को तैयार था।

रेकार्ड बनाने के धंधे में श्रीमान् रावर्ट ने, जैसाकि स्वामीजी उसे पुकारते थे, जो अनुभव प्राप्त किया था, उसका उपयोग करके स्वामीजी के गायन का रेकार्ड बनाने की एक योजना तैयार की। उसने प्रभुपाद को समझाया कि लोग तरह-तरह के अलबम बनाते थे और उनसे वे हमेशा धन कमाते थे या घाटा नहीं होने देते थे। इसलिए इस धंधे में धन खोने की सम्भावना लगभग नहीं के बराबर थी। उसने सोचा कि यह एक तरीका था, जिसके द्वारा वह स्वामीजी की ख्याति बढ़ाने में सहायक हो सकता था और उसने प्रभुपाद को अपने विचार के प्रति आश्वस्त करने का प्रयत्न किया। और प्रभुपाद ने श्रीमान् रावर्ट को, जो इस तरह उनकी सेवा करने को उत्सुक था, हतोत्साहित नहीं किया।

श्रीमान् राबर्ट : *मैं और स्वामीजी फोर्टी-सिक्स्थ स्ट्रीट में रेकार्ड कम्पनी के पास गये। हम वहाँ पहुँचे और मैंने बात शुरु कर दी। वह आदमी पूरा व्यवसायी था। वह व्यवसायी था और कमीना था—ये दोनों विशेषताएँ साथ-साथ चलती हैं। इसलिए हम एक टेप के साथ वहाँ गये और हमने उस व्यक्ति से बातचीत करने की कोशिश की। स्वामीजी बात करने लगे, किन्तु वह व्यक्ति बोला कि वह टेप नहीं बना सकता था। मैं समझता हूँ कि उसने टेप सुना, लेकिन वह उसे बनाने को तैयार नहीं था। अतः हम लोग हतोत्साहित हुए। लेकिन उसने इस विषय में कुछ अधिक नहीं कहा।*

प्रभुपाद भारत में व्यवसायी रह चुके थे। किन्तु वे नहीं सोच सकते थे कि वे विदेश में, न्यूयार्क में, एक नवयुवक की सलाह पर कोई व्यवसाय कर सकते थे। इसके अतिरिक्त, वह व्यवसाय करने नहीं वरन् प्रचार करने आये थे। जो भी हो, राबर्ट उत्साहपूर्वक उनकी सेवा में लगा था। वह कदाचित् एक नियमित ब्रह्मचारी शिष्य नहीं बन सकता था, किन्तु वह कृष्ण की सेवा की आकांक्षा रखता था। उसे मना करने का तात्पर्य था कि प्रभुपाद कृष्ण में अभिरुचि रखने वाले एक पाश्चात्य युवक को कदाचित् उनसे विमुख बना रहे हैं। प्रभुपाद कृष्ण के विषय में प्रचार करने और संकीर्तन करने आये थे और यदि एक अमेरिकन रेकार्ड के अलबम की व्यवस्था करके श्रीमान् राबर्ट कोई सहायता करना चाहते थे, तो वह स्वागत के योग्य थी।

श्रीमान् राबर्ट और स्वामीजी की संगति विचित्र थी। प्रभुपाद वयोवृद्ध, भव्य व्यक्तित्व वाले और भागवत् तथा संस्कृत भाषा के गम्भीर विद्वान थे, जबकि राबर्ट नेल्सन पाश्चात्य संस्कृति की दृष्टि से भी अनाड़ी और लौकिक व्यवहार में शून्य था। वे साथ-साथ घूमते थे। स्वामीजी नकली फर के कालर वाला जाड़े का कोट, भारतीय धोती और सफेद नुकीले जूते पहने होते थे। श्रीमान् राबर्ट एक पुरानी खाकी पैंट और एक पुराना कोट पहनता था। प्रभुपाद तेज और सुदृढ़ डग भरते हुए उस भद्दी और मटरगश्ती की चाल से चलने वाले भारी-भरकम लड़के से आगे निकल जाते थे, जिसने उनसे मित्रता स्थापित कर रखी थी।

श्रीमान् राबर्ट से आशा थी कि वे प्रभुपाद का व्यवसायियों और जमीन-जायदाद के मालिकों से परिचय कराने में सहायक होगा, किन्तु इसके लिए उसमें मुश्किल से कोई दक्षता थी। वह एकदम भोला-भाला था।

राबर्ट : *एक बार हम फोर्टी-सेकंड स्ट्रीट के विशाल कार्यालय भवन में गये और कमरे में घुस गये। एक पूरी मंजिल का किराया हजारों डालर था। इसलिए वहाँ खड़ा मैं एक आदमी से बात करता रहा, किन्तु मैं नहीं समझ पा रहा था कि इतना धन कहाँ से आयेगा। स्वामीजी विस्तृत स्थान चाहते थे और मैं नहीं जानता था कि उस आदमी से क्या*

कहूँ।

प्रभुपाद बड़ा स्थान चाहते थे और बड़े स्थान के लिए बड़ा धन चाहिए था। उनके पास धन नहीं था और राबर्ट नेल्सन के पास केवल उसकी बेकारी के चेक थे। फिर भी प्रभुपाद की रुचि बड़े स्थान में लगी हुई थी। यदि उन्हें कोई इमारत मिल जाती, तो यह उनके मिशन में एक बड़ा कदम होता। और श्रीमान् राबर्ट को काम देने का यह एक दूसरा तरीका भी था। इसके अतिरिक्त, कृष्ण कुछ भी कर सकते हैं, कुछ भी दे सकते हैं या किसी भी सामान्य या आश्चर्यजनक ढंग से अपना कार्य करके दिखा सकते हैं। इस तरह प्रभुपाद की अपनी तर्क-शैली थी और श्रीमान् राबर्ट नेल्सन की अपनी।

राबर्ट : *इमारत फोर्टी-सेकंड स्ट्रीट में सिक्स्थ और ब्राडवे के मध्य में थी। कृष्ण का मन्दिर स्थापित करने के लिए कम से कम कोई स्थान! हम ऊपर चढ़कर दूसरी मंजिल तक गये और किराए के एजेंट से मिले और उसके बाद हम वहाँ से चले आये। मैं समझता हूँ इमारत का किराया पाँच या दस हजार डालर प्रति मास था। हम इस निर्णय पर पहुँचे कि किराया बहुत अधिक था। इसलिए हम वहाँ से चल पड़े। जब एजेंट ने किराए की बात चलाई, तो मैंने हिसाब लगाया कि अच्छा हो, हम इस इमारत को न लें। हमें रुक जाना पड़ा।*

एक अन्य अवसर पर राबर्ट नेल्सन प्रभुपाद को बस द्वारा ७० वेस्ट फोर्टी-सिक्स्थ स्ट्रीट में अवस्थित होटेल कोलम्बिया ले गया। होटल में एक सूट कमरों का सेट था जिसे प्रभुपाद ने मन्दिर के रूप में प्रयोग में लाने की सम्भावना की दृष्टि से देखा, किन्तु यह भी बहुत महंगा था और उनके पास इतना धन नहीं था।

कभी कभी राबर्ट अपने बेकारी के चेकों के पैसों से प्रभुपाद के लिए वस्तुएँ खरीद देता। एक बार वह नारंगी रंग की टी-शर्टें खरीद लाया। एक बार वह वूलवर्थ स्टोर गया और वहाँ से उसने प्रभुपाद के लिए रसोई के बर्तन, कड़ाहियाँ और चैतन्य महाप्रभु तथा प्रभुपाद के गुरु महाराज के चित्रों के लिए कुछ फ्रेम खरीदे।

राबर्ट : *एक बार मैंने जानना चाहा कि चपातियाँ कैसे बनाते हैं, तो स्वामीजी बोले, "इस नुसखे की कीमत एक सौ डालर है। कृपया एक सौ डालर लाइए।" इसलिए मैं गया और कुछ पैसे ले आया, किन्तु एक सौ डालर तो मिले नहीं। किसी तरह उन्होंने मुझे चपातियाँ बनाकर दिखाईं। उन्होंने मुझे भोजन बनाना सिखाया। और वे हमेशा कहते, "हाथ धोओ, हाथ धोओ।" और "आपको चाहिए कि केवल अपने दाहिने हाथ से खाएँ।"*

और स्वामीजी से जो भी व्यक्ति मिलता, उनसे वह प्रायः हमेशा प्रभावित होता। उन्हें देखकर लोगों के चेहरे मुसकान से भर जाते और कभी कभी लोग उनके विषय में आपस

में विचित्र बातें करने लगते, जो बहुत अच्छी होतीं। स्वामीजी की अंग्रेजी हमेशा बहुत नपी-तुली होती। मेरा तात्पर्य यह है कि उनके पास वृहत् शब्द-भंडार था। लेकिन उन्हें समझने में लोगों को कभी कभी कुछ कठिनाई होती और तब किसी को उनकी सहायता करनी पड़ती।

• • •

लोअर ईस्ट साइड पर ६४ ईस्ट सेवेन्थ स्ट्रीट में पैराडॉक्स नामक भोजनालय था, जो जार्जेज ओहसावा की दार्शनिक विचारधारा और मैक्रोबायोटिक भोजन के प्रति समर्पित था। यह सड़क के तल से नीचे एक दुकान का अगला हिस्सा था, जिसके कमरे में मोमबत्ती के प्रकाश में चारों ओर छोटी-छोटी भोजन की मेजें लगी थीं। इसका भोजन सस्ता और विख्यात था। इसमें चाय मुफ्त मिलती थी; जो जितना चाहे, पिए। पैराडॉक्स केवल एक भोजनालय न था, यह आध्यात्मिक और सांस्कृतिक अभिरुचियों का केन्द्र भी था, जो ग्रीनविच विलेज या १९२० ई. के दशक के पेरिस के जलपानगृहों पर मिलने की याद दिलाता था। कोई व्यक्ति चाहे तो बिना कुछ खरीदे पैराडॉक्स में दिन-भर बैठा रह सकता था, फिर भी किसी को कोई शिकायत न होती। पैराडॉक्स में जुटने वाला जन-समुदाय पूर्व की शिक्षाओं में रुचि रखने वाला रहस्यमय समुदाय होता। जब डॉ. मिश्र के यहाँ रुकने वाले नये स्वामी का समाचार पैराडॉक्स पहुँचा तो यह खबर तेजी से फैल गई।

हार्वे कोहेन और बिल एप्स्टीन परस्पर मित्र थे। हार्वे एक स्वतंत्र कलाकार था और बिल पैराडॉक्स में काम करता था। डॉ. मिश्र के योग स्टूडियो में प्रभुपाद के आवास पर कभी कभी जाने के बाद हार्वे को पैराडॉक्स का पता चला और उसने बिल तथा अन्य मित्रों को नये स्वामीजी के विषय में बताना शुरु कर दिया।

बिल : *मैं पैराडॉक्स में एक रात काम में लगा था, जब हार्वे मेरे पास आया और बोला, "मैं मिश्र से मिलने गया था और वहाँ एक नये स्वामी आये हैं, जो सचमुच विचित्र हैं।" उस समय मैं मैक्रोबायोटिक्स और बौद्ध धर्म में लीन था, इसलिए मैंने उधर ध्यान नहीं दिया। किन्तु हार्वे बहुत चित्ताकर्षक और भावुक व्यक्ति था और स्वामी में उसकी बड़ी रुचि प्रतीत होती थी। उसने कहा, "तुम शहर की ओर चलते क्यों नहीं? मैं चाहता हूँ कि तुम स्वामी से मिलो।"*

इसलिए मैं सेवेंटी-सेकंड स्ट्रीट में स्वामीजी के एक व्याख्यान में गया। मैं अन्दर गया और स्वामीजी की उपस्थिति का मुझ पर प्रभाव हुआ। वे अत्यन्त ध्यानस्थ और गम्भीर प्रतीत हुए। वे पाण्डु-वर्ण के और दुर्बल-से लगे। मेरे अनुमान से वे यहाँ हाल ही में आये थे और अनेक झंझटों से होकर निकले थे। वे वहाँ बैठे एक छोटी थैली में ली हुई माला

फेरते हुए जप कर रहे थे। डॉ. मिश्र का एक शिष्य उस समय भाषण दे रहा था। अन्त में उसने स्वामीजी का परिचय कराया। उसने कहा, "हम स्वामी-रूपी सूर्य के चन्द्रमाओं के समान हैं।" उसने स्वामीजी का परिचय इस तरह कराया। स्वामीजी खड़े हुए और बोले। मैं निश्चय नहीं कर सका कि मैं उनके भाषण के विषय में क्या विचार बनाऊँ। उस समय तक भारतीय शिक्षा के सम्बन्ध में मेरी जानकारी केवल रामकृष्ण के माध्यम से थी। जहाँ तक मैं जानता हूँ, यह पहला अवसर था जब भक्ति-धर्म का आगमन अमेरिका में हुआ।

बिल एप्स्टीन राबर्ट नेल्सन से सर्वथा भिन्न, अत्यन्त चलता-पुर्जा, रुमानी व्यक्ति था। उसके बाल लम्बे, घुंघराले और काले थे और उसने दाढ़ी बढ़ा रखी थी। वह आकर्षक और फुर्तीला था और अपने ऊपर यह भार ले रखा था कि नगर में जो आध्यात्मिक गतिविधियाँ हों, उनकी खबर भोजनालय के लोगों तक पहुँचाए। जैसे ही नये स्वामी के विषय में उसकी रुचि हो गई, उसने उन्हीं को भोजनालय में निरन्तर चर्चा का विषय बना दिया।

बिल : *मैं पिछले भाग में गया और भोजनालय के प्रबन्धक रिचर्ड से बोला, "मैं स्वामीजी के लिए कुछ भोजन ले जा रहा हूँ। आपको कोई आपत्ति तो नहीं है?" वह बोला, "नहीं, जो भी चाहो, ले जाओ।" इस लिए मैंने थोड़ा भूरा चावल और कुछ अन्य चीजें लीं और उन्हें स्वामीजी के पास वहाँ ले गया।*

मै ऊपर गया और किवाड़ खटखटाया, किन्तु कोई उत्तर नहीं मिला। मैंने फिर खटखटाया और मैंने देखा कि बत्ती जल रही थी—क्योंकि किवाड़ में शीशा लगा था। अन्त में स्वामीजी आये और उत्तर दिया। मैं सचमुच डर गया, क्योंकि मैंने वास्तव में कभी किसी को गुरु नहीं माना था, वे बोले, "अन्दर आ जाओ, आ जाओ, बैठो।" हम वार्तालाप करने लगे और उन्होंने कहा, "जब लोग मिलते हैं, तो पहला कार्य वे यह करते हैं कि एक दूसरे के प्रति प्रेम दर्शाते हैं। वे एक दूसरे को अपना नाम बताते हैं और खाने की किसी चीज की अदला-बदली करते हैं।" अत: उन्होंने मुझे सेब का एक टुकड़ा दिया और वह टेप रेकर्डर दिखाया, जिसे उन्होंने सम्भवत: अपना संकीर्तन टेप करने के लिए रखा था। तब वे बोले, "क्या आपने कभी कीर्तन किया है?" मैंने कहा, "नहीं, मैंने कीर्तन पहले कभी नहीं किया है।" इसलिए उन्होंने एक कीर्तन का टेप बजाया और स्वयं कुछ और कीर्तन करके सुनाया। वे बोले, "फिर जरूर आना," मैंने कहा, "हाँ, यदि मैं फिर आया तो आपके लिए कुछ और भोजन लाऊँगा।"

जेम्स ग्रीन, जो कूपर यूनियन में तीस साल से काष्ठ-कला का अध्यापक था, प्राच्य दर्शन में शोध कर रहा था। वह उसी खंड में रहता था, जिसमें पैराडॉक्स भोजनालय था और वहाँ शाम को अपना नियमित भोजन करते समय हार्वे कोहेन और बिल एपस्टीन से

स्वामी के बारे में सुनने लगा।

जेम्स : *सचमुच हार्वे और बिल ने मुझे सब बातों के बारे में बताना आरम्भ किया। मुझे याद है कि एक दिन शाम को स्वामीजी डॉ. मिश्र के यहाँ उपस्थित थे, किन्तु उन्होंने कोई भाषण नहीं दिया था। डॉ. मिश्र के विद्यार्थियों की रुचि योग के शारीरिक पक्षों में अधिक थी। स्वामीजी की शिकायतों में भी यह एक शिकायत थी।*

सेवेंटी-सेकंड स्ट्रीट में अवस्थित स्वामीजी का कमरा बहुत छोटा था। वे एक बहुत संकीर्ण कमरे में रह रहे थे, जिसका दरवाजा एक सिरे पर था। स्वामीजी कमरे में एक तरफ बैठते थे और हमें एक तरह से एक दूसरे से सटकर बैठना पड़ता था। कमरा आठ फुट से अधिक चौड़ा नहीं रहा होगा और वहाँ एक तरह से अँधेरा था। वे अपनी पतली चटाई पर बैठते थे और हम लोग फर्श पर बैठ जाते थे।

हम कीर्तन नहीं करते थे। हम केवल वहाँ जाते थे और वे व्याख्यान दिया करते थे। भगवद्गीता पर व्याख्यान सुनने के अतिरिक्त हमारे लिए अन्य कोई आकर्षण नहीं था। मैंने बहुत सारा साहित्य पढ़ रखा था और मैं समझता हूँ कि अपने संकोची ढंग से मैं एक गुरु की तलाश में था। मैं समझता हूँ कि मैं आक्रामक प्रकृति का नहीं हूँ और न मुझमें यो-त्यों अपना काम निकालने का गुण है। मैं केवल एक श्रोता था और भगवद्गीता सुनना ठीक लग रहा था। इसलिए मैं वहाँ जाता रहा। ऐसा लगता था कि बात वहाँ से आगे बढ़ेगी। वहाँ अधिकाधिक लोगों का आना आरम्भ हुआ। तब वहाँ बहुत भीड़ होने लगी और उन्हें दूसरा स्थान खोजना पड़ा।

प्रभुपाद की कक्षाओं में आने वाले पुराने और अधिक रूढ़िवादी लोगों के विपरीत पैराडॉक्स में इकट्ठा होने वाला नया समुदाय युवाजनों और हिप्पियों का था। उन दिनों किसी को लम्बे बाल और दाढ़ी रखे देखना असामान्य बात थी और जब वेस्ट साइड में होने वाली स्वामीजी की बैठकों में इस तरह के लोग आने लगे, तो पुरानी पीढ़ी के लोग चौंकने लगे। जैसाकि एक ने कहा, "भक्तिवेदान्त स्वामी दूसरे प्रकार के लोगों को चुनने लगे हैं। वे उनसे बोवरी या किसी अटारी में मिलते। ये लोग विचित्र सी हैट लगाए और अपने आपको भूरे कम्बलों में लपेटे हुए आते। उन्हें देखकर मैं तो भौंचक्का रह जाता।"

पैराडॉक्स में आने-जाने वाला इक्कीस वर्षीय डेविड एलेन खोजी प्रवृत्ति का था। उसने नशीली दवाओं के प्रयोग के बारे में पढ़ा था और उनसे आकृष्ट होकर वह आशावान् बनकर नगर आ गया था। स्वामीजी के व्याख्यानों को सुनने वाले पुराने लोगों का समुदाय उसे "वेस्ट साइड पर जमा होने वाली बुढ़ी स्त्रियों का बातूनी समूह" जैसा लगा।

डेविड : *तब हम हिप्पी नहीं कहलाते थे। किन्तु जो लोग पहले-पहल स्वामीजी से आकृष्ट हुए थे, उन्हें हम अजीब-से लगते। इस नये समुदाय के साथ ताल-मेल बैठाना*

पुराने लोगों के लिए बिल्कुल अलग बात थी। मैं समझता हूँ उस समय तक भारत से आये शिक्षकों में से अधिकांश के अनुयायी पुरानी पीढ़ी के लोग थे। कभी कभी इनमें धनाढ्य विधवाएँ उनकी आय का स्रोत होती थीं। किन्तु स्वामीजी एकदम तरुणों और गरीब समुदाय के लोगों की ओर उन्मुख हुए। दूसरी घटना यह हुई कि बिल एप्स्टीन और अन्य लोग आपस में इस बात की चर्चा करने लगे कि अच्छा हो कि स्वामीजी लोअर ईस्ट साइड में डाउनटाउन में आ जाये। डाउनटाउन में गतिविधियाँ तेजी पर थीं, जबकि अपटाउन में ऐसी तेजी नहीं थी। डाउनटाउन में लोगों को उनकी आवश्यकता थी; डाउनटाउन ठीक था और उनके लिए तैयार था। डाउनटाउन में जीवन था। वहाँ प्रचुर क्रियाशीलता थी। ●